लेखक - जी.ए. कुलकर्णी
प्रथम प्रकाशन - मराठवाड़ा मासिक
कालखंड - १९४० - ५०

ग्रहण

(अनुवाद) - लीना मेहेंदले

दूर मठ में घंटा-घड़ी ने चार बार टनटन किया तो दादंभटने उठकर लालटेन जला लिया। रात को शर्ट धोकर सूखने के लिए रस्सी पर डाल दिया था। उसे छूकर देखा - अभी सूखा नही था। लेकिन इसे पहना जा सकता है सोचकर उसकी चिंता कुछ कम हुई। उसने तो दोपहर ही शर्ट धो दिया था लेकिन शाम से मींह बरसने लगा, जो घंटे दो घंटे पहले बरस रहा था। अब तक कमरे की एक दीवार तो इतनी गीली हो गई थी कि उंगली से दबाओ तो मिट्टी अंदर को धँस जाये।

शाम को जब देसाई के घर से संदेश आया कि दो चार पुराने कपड़े है - ग्रहण खुलने पर आकर ले जाना, तभी दादंभट अपना शर्ट धोकर रस्सी पर डाल रहा था और गडबडा गया था कि क्या पहनकर देसाई के घर जायेगा।

वैसे दूसरा शर्ट भी था। लेकिन वह इतना तार-तार हो चुका था कि काफी संभालने के बावजूद परसों जब वह उतारने लगा तो दो जगह से फट पडा। देसाई के संदेश के बाद शाम के दो घंटे निकालकर उसे किसी तरह सिल लिया था दादंभट ने। यदि यह शर्ट बिलकुल ही नही पहन पाया, तो उसे ही पहनना पडेगा।

कमरे के पिछवाडे का दरवाजा खोलकर वह आंगन में चला आया। पेड़ों से कुछ बूँदें उठाकर ठंडी हवा ने उसकी खुली देह पर फेंकी। वह कंपकंपाने लगा। सामने इमली के पेडं की एक टहनी में चाँद अटका हुआ था। कुछ बादल उसके चारों ओर इतरा रहे थे। नाखून जितना चाँद का एक हिस्सा अब भी टूटा हुआ था। उसे देखकर दादंभट ने अनुमान लगाया कि अब बीस - पच्चीस मिनट में ग्रहण पूरा खुल जायेगा। फिर उसे ठंडे पानी से नहाना पडेगा। इस विचार से उसे फिर एक बार जोर से कंपकंपी आई।

लालटेन लेकर वह कुँए की ओर चला। अब पिछवाड़े आंगन में काफी पानी जमा हो चुका था, और इमली के पत्तों से लगातार पानी टपक रहा था। चलते चलते दादंभट हठात् ठहर गया। लालटेन ऊँचा उठाकर देखा - पेड़ के तने से लगकर मैली चादर में लिपटा कोई दुबका हुआ था। थोड़ा आगे आकर उसने कड़े स्वर में पुकारा - कौन है?

"मैं हूँ दादा, मैं बुढिया....." चादर से मुँह बाहर लिकाल कर मिमियाती आवाज में किसी ने जबाव दिया।

उस पर खीजे या हँसे, दादंभट समझ नही पाया । यह बुढिया बचा खुचा बासी खाना ले जाने के लिए रोज सुबह अगवाडे आती थी। उसका चेहरा इतना बूढा था मानो किसी ने झुर्रियाँ बीन-बीन कर उसके चेहरे पर बाँधी हों। वह आती तो उसके पीछे बच्चों का एक झुंड भी आ जाता क्यों कि वह कई तरह की नकलें उतारती थी - रोता हुआ बच्चा, छुक् - छुक् चलकर सीटी बजाने वाली रेलगाड़ी, झगडने वाले कुत्ते.....।

बुढिया की आवाज फँटे बाँस जैसी थी और मुँह में एक भी दांत नहीं बचा था। नकल दिखा चुकने के बाद वह अलमूनियम की एक चूड़ी पहना अपना हाथ फटाफट पेट पर मारकर कहती - "अब जाओ

रे बच्चों, बुढिया के लिए कोई परॉठे, लड्डू ले आओ ।" उसकी नकल सुनते हुए बच्चे एक दूसरे को धकियाते हुए खूब हँसते। उसकी नकल से, या उसे ही हँसते थे कौन जाने। कभी कुछ न मिलें फिर भी बगैर गुस्साए वह बच्चों से कहती - "अब जाओं मेरे चूजों, कल बूढिया के लिए जलेबी बचा कर रखना।" फिर झुक कर ठक्-ठक् लाठी टेकती हुई निकल जाती । रात वह गुजारती थी बस स्टॉप की शेड में जो परले रास्ते पर था। इसीलिए इस अचानक बेला में उसे अपने यहाँ देखकर दादंभट को आश्चर्य हुआ।

"यहाँ क्या कर रही है अंधेरे में ?" "दादा, बस स्टॉप पर घुटनों तक पानी भर गया है। फिर कहॉ जाऊँ मैं?" बुढिया उठकर खड़ी हो गई। "और आज सुना है गिरान भी है। गिरान खत्म होगा तो कोई न कोई एकाध फटा पुराना कपड़ा इस बुढिया पर भी फेंकेगा। आज बोहनी भी आपकी ही होगी दादा। एक बार भूखे भेडियों की तरह वह वडारी लड़कों की टोली आई गिरान माँगने तो फिर मुझ बुढिया को एक सूत भी नहीं मिलेगा।"

तो ग्रहण खुलने की राह देखती रातभर इसी पेड़ के नीचे बैठकर यह कुडकुडाई है, दादंभट ने सोचा। "थोड़ा ओट देखकर बैठना था - यहाँ पानी में क्यो भैंस जैसी पड़ी हो?" वह चिढकर बोला - "और तुझे साड़ी वाड़ी देने के लिए मैं क्या चोरी करूँ ? घर में कोई औरत जात नहीं है यह तुझे मालूम है।"

बुढिया लपलप करती हुई हँसी। "कैसी ओट दादा, अब तो बुढिया मरेगी तभी ओट मिलेगी। और मैंने कभी तुमसे साड़ी माँगी है क्या? धोती दे देना, या शर्ट या गमछा। मुझे नहीं तो बेटे के काम आ जायेगा। बेटा? दादंभट के आश्चर्य की सीमा न रही। बुढिया को बेटा तो क्या, दूर दूर का कोई रिश्तेदार होने का संदेह भी कभी उसके मन में नहीं उभरा था।

"और क्या ? होगा तुम्हारे जितना ! शहर में दुर्गा देवी के मंदिर में भीख माँगता है। आ जाता है कभी कभार। कुछ बुढिया को दे जाता है, कुछ बुढिया से ले जाता है - भला है बेचारा।" बुढिया ने एकदम अभिमान में भरकर कहा।

चाँद का टूटा हुआ टुकडा कहीं से आकर वापस चिपक गया था। लालटेन वहीं टेक कर दादंभट कुएँ पर गया और एक बालटी पानी सर पर उँडेल कर गीले बदन लेकर जल्दी वापस आ गया। सूती गमछे से रगड कर बदन पोछने से थोड़ी गर्मी भी आ गई। बाहर अब दे दान, दे दान का शोरगुल स्पष्ट हो रहा था। दादंभट समझ नहीं पा रहा था कि रातभर दान की आशा लगाए बैठी उस बुढिया को क्या दे। चोरी पकड़ी जाने जैसी शरम उसे महसूस हुई। बुढिया पर गुस्सा भी आया। गाँव में पक्के, दुमंजले बंगले कई थे। सबको छोडकर मेरा ही घर इसने ढूँढा ! मेरी गरीबी का ढिंढोरा पीटने?

खिसियाकर दादंभट ने अपना पुराना शर्ट उठाया। कल दो घंटे मेहनत से सिला था, वह अपने लिए नहीं, इस बुढिया के लिए। चलो कोई बात नहीं। उसे तो देसाई के घर से कुछ मिलने वाला है ही। उसे एक कडुआहट भरा मजा आने लगा। शर्ट लेकर वह बाहर आया। "दे दान" की गूँज अब बिलकुल पास आ गई थी। वह थमक गया। सात आठ बच्चों की टोली उसके आंगन में घुस आई थी। बारिश से उनके केश गालों से चिपक गए थे और वे बुरी तरह झूम झूम कर चिल्ला रहे थे।

बुढिया आगे आई। हाथ की लाठी उठाकर उसने बच्चों को भगाने का प्रयास किया। "जाओ रे भैंसों, मैं रात भर यहॉ कुडकुडाई और अब तुम आए जंगली सूअरों की तरह झुंड के झुंड बांधकर।"

इसपर बच्चे और भी जोर से चिंघाडने लगे। एक ने उसकी लाठी छीनकर दलदल में फेंक दी। दूसरा उसकी मैली चादर से भिड़ने लगा।

अब जाते हो या फोडूँ एक-एक का माथा? दादंभट उनपर बरस पडा तो बच्चे पीछे हट गए। उसने शर्ट को लपेट कर बुढिया पर फेंका और कहा - "ये ले और तू भी निकल यहाँ से, मुझे भी बाहर जाना है, जा।" उसका फेंका शर्ट बुढिया ने लपक लिया। लेकिन उसे अपनी चादर में छिपाए इससे पहले ही दो बच्चे उससे लिपट गए। उनके धक्के से बुढिया गिर पड़ी और तडातड गालियाँ बकने लगी। दादंभट का गुस्सा अब उफनने लगा। उसने अंदर से कपडे फैलाने वाली लाठी लाई और बच्चों पर दौड पड़ा। बच्चों ने अंतिम बार एक झटका दिया और शर्ट का लम्बा हिस्सा झंडे की फहराते हुए दे दान, दे दान चिल्लाते हुए भाग लिए।

बुढिया ने हाथ फैलाकर अपनी लाठी उठाई और खड़ी हो गई। अब उसकी देह पर जगह जगह मिट्टी चिपक गई थी। लेकिन हाथ की शर्ट को उसने बचा रखा था। उसे एक बार फटक कर उसे सीधा किया। फिर खिदक खिदक कर हँसने लगी। बोली - भगवान बडा दयालू है दादा, मेरे बेटे को ये शर्ट बिल्कुल फिट बैठेगा।

लेकिन उसके सीधे किए हुए शर्ट को देखकर दादंभट को लगा कि वह ठगा गया है। बच्चों की खीचातानी में शर्ट की दाहिनी बाँह उखड गई थी। कल की सारी मेहनत तो बेकार ही हो गई थी लेकिन अपना नुकसान झेल कर बुढिया को जो देना चाहा था, वह भी बुढिया के हिस्से में नहीं पहुँचा था। "अब क्या करोगी यह शर्ट लेकर ! उन बच्चें की टाँग तोडना ही जरुरी था।"

बुढिया अब भी हँसे जा रही थी। "यही तो बेस हुआ दादा, बुढिया की मेहनत बच गई। नहीं तो देखो, आँख फोड फोड कर बाँह की सिलाई उखाडने में बुढिया के बाल भी झड जाते। बच्चे उपकार ही कर गए। अरे, मेरे बेटे की दाहिनी बाँह पूरी की पूरी कटी हुई है दादा।"

दादंभट पर मानों बिजली गिरी। क्षणभर भूल कर कि उसे देसाई के घर जाना है, वह बुत बना खड़ा रहा।